अपना आधार ही मुझ को छल गया

प्रफुल्ल कोलख्यान

मैंने भूगोल नहीं पढ़ा, खगोल नहीं जाना
मैंने तो बस सूरज को देखा था, सूरज को
और चल पड़ा था,
बस एक, एक मुट्ठी उजाला की तलाश में

हर बार सूरज संधि की उस छद्म-रेख में समा गया
जहाँ धरती और आकाश मिलते हुए देखे जाते हैं

मैं चलता रहा, चलता रहा पीढ़ी-दर-पीढ़ी
लेकिन मेरे हाथ आया सिर्फ अंधकार और अंधकार
दल-दल, छप-छप अंधकार
झाड़-झंखाड़, निर्दय पठार
सर्वग्रासी नदियों का दोआब
अंध आकार, अंधकार

वह सारा चरित्र मेरे अंदर समा गया
जो अंधकार का निष्कर्ष है

यह उगता सूरज भी मुझ से उतना ही दूर है
जितना कल डूबता हुआ सूरज मुझ से दूर था
आदमी आज उतना ही नहीं, उससे भी अधिक
अपनी करनी से मजबूर है, जितना कल था

कितना कातर हो गया मैं
यह पता जब चल गया
कोई और नहीं
अपना आधार ही मुझ को छल गया